शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अगस्त 2025
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

सम्पादकीय

मनुष्य धरती और आसमान से अलग नहीं है

मासानोबू फुकुओका

लोग कहते हैं कि इन्सान से ज्यादा बुद्धिमान कोई अन्य प्राणी नहीं होता। अपनी इसी अक्ल का इस्तेमाल करते हुए वही एकमात्र ऐसा प्राणी बन गया है जो परमाणु अस्त्रों का इस्तेमाल करने में समर्थ हो गया है। विकास की आपको क्या जरूरत है ? यदि आर्थिक तरक्की 5 से लेकर 10 प्रतिशत हो जाती है तो क्या सुख भी द्विगुणित हो जाता है ? यदि वृद्धि दर 0 रहती है तो इसमें क्या गलत है ? क्या सादगी से रहने और इत्मीनान से जीने से भी बेहतर और कोई चीज हो सकती है ?

लोग किसी चीज को खोजते हैं, वह कैसे काम करती है यह पता लगाते हैं और उसके लिए प्रकृति का उपयोग करते हैं, और सोचते हैं कि इससे मानवजाति का भला होगा। आज की तारीख में इसका नतीजा यह हुआ है कि हमारी धरती प्रदूषित हो गई है। लोग भ्रमित हो गए हैं और हमने आधुनिक युगकी आपा-धापी को आमंत्रित कर लिया है। चीजों के मूल स्रोत के नजदीक रहने की एक विशेष सार्थकता और संतोष होता है। जीवन की एक गति, एक कविता की तरह होती है। किसान उसी समय से अति व्यस्त हुआ है जब से लोगों ने दुनिया की पड़ताल शुरू की और यह तय कर लिया कि ऐसा करना 'अच्छा' है तथा हमें 'वैसा' नहीं करना चाहिए। यदि किसान लगभग बिना कुछ किए रहते तो उनकी स्थिति आज से बेहतर होती।

लोग जितना 'ज्यादा' करते हैं उतना ही समाज विकसित होता है तथा उतनी ही ज्यादा समस्याएं खड़ी होती हैं। प्रकृति का उत्तरोत्तर बढ़ता विध्वसंन, संसाधनों का कम होना, मानव की आत्मा की बेचैनी और बिखराव, इन सबका कारण मानव की कुछ न कुछ हासिल करने की कोशिश रही है। प्रारंभ में प्रगति करने का न कोई कारण था न ऐसी कोई चीज थी जिसे करना जरूरी ही हो। अब हम उस मुकाम पर आ पहुंचे हैं जहां हमारे लिए इसके अलावा कोई और चारा नहीं बचा है कि हम एक 'आंदोलन' इस बात के लिए चलाएं कि अब हमें कुछ भी करके नहीं दिखाना है।

इन्सान प्रकृति के रूपों को नष्ट कर सकता है, लेकिन उनका सृजन नहीं कर सकता। प्रकृति की पूर्णता को जानने में असमर्थ होने के कारण मानव इससे ज्यादा कुछ नहीं कर पाता कि वह उसका एक अपूर्ण प्रादर्श रचे और फिर यह खुशफहमी पालने लगे कि उसने कुछ प्राकृतिक चीज गढ़ी है। प्रकृति को जानने के लिए हमें सिर्फ इतना ही करना है कि हम यह समझ लें कि हम वास्तव में कुछ नहीं जानते और जानने में समर्थ भी नहीं हैं। इसके बाद भी उससे यह उम्मीद की जा सकती है कि वह विभेदकारी ज्ञान में अपनी दिलचस्पी खो देगा। जैसे ही वह विभेदकारी ज्ञान का परित्याग कर देगा, अ-विभेदकारी ज्ञान अपने आप उसके भीतर से ही पैदा होगा। यदि वह जानने के बारे में कभी सोचता ही नहीं, यदि उसे परवाह ही नहीं है कि वह कुछ जाने तो एक वक्त आएगा जब वह समझने लगेगा। उसके सामने अपने अहं को त्याग करने, इस विचार को त्यागने कि मानव धरती (प्रकृति) और आसमान (ईश्वर) से अलग कोई हस्ती है, के अलावा और कोई रास्ता ही नहीं है। (एक तिनके से आई क्रांति, अनुवादक: हेमचंद्र पहारे, प्रकाशक : फ्रेंड्स रूरल सेंटर रसूलिया, होशंगाबाद, प्रथम संस्करण नवंबर 1992)